शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

डॉ.रामविलास शर्मा की दृष्टि में प्रेमचंद

डॉ.हरेराम सिंह
वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय
आरा, बिहार, भारत

डॉ.रामविलास शर्मा का कृतित्व

रामविलास शर्मा हिंदी के प्रगतिशील आलोचकों में से खास हैं। हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में रामचंद्र शुक्ल के बाद बहुत ही गंभीरता के साथ वे पढ़े जाते हैं। इनका लेखन संसार विपुल है। इनमें मौलिक विचारों का ताना-बाना बहुत ही विस्तृत है। इनके लेखन को साधना आसान नहीं है फिर भी इनकी आलोचना की वैचारिक प्रतिबद्धता अपनी तरफ आकर्षित करने से नहीं चूकती। रामविलास शर्मा की महत्वपूर्ण कृतियों में 'प्रेमचंद' (1941ई.) ,'भारतेंदु-युग' (1943 ई.),'निराला' (1946 ई.),'प्रगति और परंपरा' (1949 ई.),'साहित्य और संस्कृति' (1949 ई.), 'प्रेमचंद और उनका युग' (1952 ई.),' प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ' (1954 ई.), 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल और हिंदी आलोचना' (1955 ई.), 'भाषा और समाज' (1961 ई.), 'साहित्य: स्थायी मूल्य और मूल्यांकन' (1968 ई.), 'निराला की साहित्य साधना'(तीन भाग ,1969 ई., 1972 ई., 1976 ई.),'भारतेंदु युग और हिंदी साहित्य की विकास परंपरा(1975 ई.), 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण' (1977 ई.), 'नई कविता और अस्तित्ववाद' (1978 ई.), 'परंपरा का मूल्यांकन' (1981 ई.), 'भाषा युगबोध और कविता'(1982 ई.),'विराम चिह्न' (1985 ई.), तथा 'हिंदी जाति का इतिहास'(1986 ई.) मुख्य हैं।

डॉ.रामविलास शर्मा का आलोचना कर्म

रामविलास शर्मा ने मार्क्सवादी आलोचना को अपने विपुल लेखन तथा तर्कणा से समृद्ध तथा पुष्ट किया है। हिंदी में शिवदान सिंह चौहान तथा प्रकाश चंद्र गुप्त के बाद प्रगतिवादी आलोचना पर गहनता के साथ लिखने, विचार-विमर्श करने और उसे स्थायित्व प्रदान करने वाले आलोचकों में रामविलास शर्मा जी मुख्य हैं। रामविलास शर्मा की प्रगतिवादी दृष्टि पूरे हिंदी साहित्य के इतिहास पर है। वे साहित्य, भाषा और उसकी परंपरा के गहन अध्येताओं में से हैं। उनकी दृष्टि से हिंदी साहित्य का कोई कोना अछूता नहीं रहा है। भारतेंदु हरिश्चंद्र, प्रेमचंद, निराला उनके प्रिय लेखकों में से हैं। वे साहित्य का मूल्यांकन समग्रता में करते हैं। साथ ही तत्कालीन सामाजिक सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक बदलावों के आलोक में सहित्य को परखने, उसकी धारा को बूझने तथा आमजन पर उसके प्रभाव को वे आंकने का कार्य भी करते हैं। रामविलास शर्मा ने अपने युग के परिवर्तन और प्रभाव को जितनी तीव्रता के साथ महसूस किया है, उसे उसी रूप में आलोचना में जगह-जगह लिखने की कोशिश की है। साहित्य का परिवर्तन समाज, संस्कृति और राजनीति के परिवर्तन से बिल्कुल अलग नहीं होता है। वह तो उसी का प्रतिबिंब होता है। आलोचना साहित्य भी कृतियों के मूल्यांकन के क्रम में इन परिवर्तनों को रेखांकित करते चलता है। साहित्य की आलोचना इतिहास का एक अंग है और उस इतिहास से रामविलास शर्मा भलीभांति

परिचित हैं। कहानी और उपन्यास लेखन की परंपरा में जो इज्जत प्रेमचंद की है वही इज्जत आलोचना के क्षेत्र में रामविलास शर्मा की है। रामविलास शर्मा अकारण प्रेमचंद को रेखांकित नहीं करते हैं बल्कि साहित्य की धारा को प्रेमचंद ने जिस दिशा की ओर मोड़ दिया था, निश्चित ही वह हिंदी कथा साहित्य के क्षेत्र में किसी बहुत बड़ी उपलब्धि से कम नहीं है। प्रेमचंद भारतीय किसानों के अमर शिल्पी हैं और उस शिल्पी के महत्व को रेखांकित करने और उसकी कृतियों के मूल्यों को स्थापित करने में रामविलास शर्मा का बहुत बड़ा योगदान है।

डॉ.रामविलास शर्मा की दृष्टि में प्रेमचंद

डॉ.रामविलास शर्मा ने 'परंपरा का मूल्यांकन' (1981ई.) आलोचना पुस्तक में 'प्रेमचंद' नाम से लगभग एक दर्जन पृष्ठों में प्रेमचंद के संबंध में जो कुछ लिखा है उसकी एक-एक पंक्ति हमें प्रेमचंद को लेकर सोचने पर बाध्य करती है। उन्होंने लिखा है -"प्रेमचंद का युग समाप्त हो गया है या समाप्ति पर है। उनके युग की राजनीति आज बड़ी तीव्र गति से बदल रही है; पुराने आदर्श कसौटी पर कसे जा रहे हैं और नई-नई शक्तियाँ रंगभूमि में आकर नेतृत्व की चेष्टा कर रही हैं। सन्'20 और '30 से सन् '40 में बहुत बड़ा अंतर है। यह हमारी प्रगति का चिह्न है कि एक-एक दशक में एक-एक पीढ़ी- जैसा परिवर्तन होता दिखाई देता है। राजनीति में युग को समाप्त होते देर भी लगती है, क्योंकि जिनके हाथ में अधिकार है , वे उसे कठिनता से छोड़ते हैं, परंतु साहित्य में पुराने नेताओं में से कुछ तो नए आगंतुकों का नेतृत्व करने के लिए स्वयं उत्सुक रहते हैं कुछ अपना कार्य कर चुकने पर यों भी पीछे पड़ जाते हैं। प्रेमचंद के युग को देखते हुए हम कह सकते हैं कि क्या राजनीति में, क्या साहित्य में, उस समय उन्हीं का व्यक्तित्व सबसे अधिक क्रांतिकारी था"[1]

राजनीति और साहित्य में प्रेमचंद का व्यक्तित्व रामविलास शर्मा की दृष्टि में क्रांतिकारी है, तो उसकी वजहें हैं। प्रेमचंद साहित्य के द्वारा जनकल्याण तो कर ही रहे थे, राजनीति में भी उनकी सक्रियता देश को आजाद कराने की थी। वे गाँधी के विचारों के बहुत नजदीक थे। वे चाहते थे कि अछूतों का उद्धार हो। किसानों का कायाकल्प हो। पर ब्रिटिश राज के जुए को किसी भी कीमत पर फेंकना चाहते थे, क्योंकि उनके शोषण और अनाचार से भारत कंगाल होता जा रहा था और भारतीय किसान दिनानुदिन गरीब होता जा रहा था। उनका शोषण ब्रिटिश भी कर रहे थे और भारतीय जमींदार भी। प्रेमचंद के उपन्यास 'प्रेमाश्रम' (1922 ई.) में किसान और जमींदारों का संघर्ष तीखे रूप रूप में उभर कर सामने आया है। इस उपन्यास से प्रेमचंद की उस दृष्टि का पता चलता है जिसमें वे किसानों के जीवन में खुशहाली देखना चाहते हैं। इस उपन्यास का नायक प्रेमशंकर किसानों के लिए ही जीवन अर्पित कर दिया है। प्रेमचंद का 'गोदान' (1936 ई.) तो किसान जीवन का महाकाव्य ही माना जाता है। जिसमें प्रेमचंद एक किसान को भूमिहीन होते दिखाते हैं। जहाँ वह किसान महाजन और पुरोहितों की वजह इतना दब गया है कि मानो उसका प्राण ही निकल गया है! रामविलास शर्मा ने 'प्रेमचंद' (1941 ई.) पुस्तक में यह बताया है कि उन्होंने प्रेमचंद के व्यक्तित्व को सबसे क्रांतिकारी क्यों बताया है, कारण कि प्रेमचंद की दृष्टि में किसानों का उत्पीड़न अछूता नहीं था। प्रेमचंद ने लिखा है- "क्रांतिकारी इसलिए था कि उन्होंने किसानों के उत्पीड़न पर ध्यान केंद्रित किया था। उस समय मार्क्सवादी कार्यकर्ताओं ने कुछ बड़े नगरों के मजदूरों को संगठित किया था पर किसानों में उनका काम, सन् 36 तक, नहीं के बराबर था। राजनीति में प्रेमचंद का

व्यक्तित्व सबसे अधिक क्रांतिकारी था इन्हीं किसानों के संदर्भ के कारण, न केवल गाँधीवादियों की तुलना में, वरन मार्क्सवादियों की तुलना में भी।"[2]

इससे सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रेमचंद अपने युग से बहुत आगे थे रामविलास शर्मा ने अपने लेखन में इसे सोदाहरण सिद्ध किया है। आज किसान पर चौतरफा हमले हो रहे हैं। नए कानून के आलोक में उन्हें पंगु बनाने के हर संभव प्रयास किए जा रहे हैं, किंतु किसानों ने अपने बलिदान से अपने आप को बहुत हद तक बचाने की कोशिश की। उनका बलिदान दुनिया के इतिहास में सदा याद किया जाएगा कि उनके अपने ही देश के कानून निर्माताओं ने कैसे उन्हें मरने पर विवश किया और बिन रोटी-पानी के रात-रात भर सड़कों पर जीने को मजबूर किया गया! नई आर्थिक नीति ने किसान के सपने पर तुषारापात किया है, जब प्रेमचंद जीवित थे उस वक्त भी उनके आसपास किसानों पर जुल्म ढाये जाते थे जिससे द्रवित होकर किसानों के पक्ष में प्रेमचंद ने लेखनी उठाई तो सदा के लिए किसानों के ही होकर रह गए। 3 जुलाई 1933 को एक पत्र' महाजन और किसान' में प्रेमचंद ने लिखा कि - "हम यह नहीं कहते कि हमारे सामाजिक जीवन में महाजन का कोई स्थान नहीं है और न यह कि उससे जनता का कोई उपकार नहीं होता, मगर अभी महाजनों को अपने असामियों पर अत्याचार करने की जो कानूनी सुविधाएँ प्राप्त हैं, उनमें कुछ कमी होने की परम आवश्यकता है। सूद की कोई सीमा होनी चाहिए और उसका कुछ दर भी निश्चित होना चाहिए। अभी तो यह हाल है कि किसानों से मूल का कई गुना ब्याज में वसूल कर लिया जाता है, फिर भी मूल ज्यों-का-त्यों बना रहता है। ऐसे उदाहरण घर-घर मिलेंगे कि महाजन ने पचास रुपये देकर असामी पर दो सौ रुपये की डिक्री कराई और उसके पास जो कुछ था वह सब नीलाम करा लिया।"[3]

मतलब साफ है कि प्रेमचंद की दृष्टि में किसान और उनकी समस्याओं का स्थान सर्वोपरि था। इसलिए प्रेमचंद की कहानी 'पूस की रात' हो या 'मुक्ति-मार्ग' या 'सवा सेर गेहूँ' किसान की चिंता ही वहाँ मुख्य है। प्रेमचंद के उपन्यास 'प्रेमाश्रम', 'रंगभूमि' और 'गोदान' में मुख्य समस्या किसानों की है जहाँ प्रेमचंद बड़े मनोयोग से उनकी जिंदगी को रचते चलते हैं। समाज का सबसे निकृष्ट तथा पीड़ित वर्ग आज भी देखें तो किसानों का ही है। आज किसानों पर जमींदारों का शासन तो नहीं है, किंतु उसका शोषण अबाध गति से जारी है। बिचौलिए और पूँजीपति उसके जीवन से खेल रहे हैं। बीज भी पेटेंट करा लिए गए हैं और उन्हें पॉकेट में बंद कराकर ऊँची कीमतों पर बेची जा रही हैं। किसान बाजारवाद की चपेट में है। उनका शोषण नए तरीके से हो रहा है। प्रेमचंद के समय में किसानों की स्थिति है उससे आज की स्थिति भिन्न नहीं है। हाँ, कपड़े-लत्ते अब लगभग सब को उपलब्ध हैं। औद्योगिक-क्रांति की वजह से यह संभव हुआ है पर उद्योगपतियों के दबाव और उन को लाभ पहुंचाने के चक्कर में किसान आज भी उपेक्षित हो रहे हैं।

रामविलास शर्मा ने प्रेमचंद में जहाँ एक ओर गाँधीवाद के आदर्श स्वरूप का दर्शन किया है वहीं दूसरी तरफ मार्क्स के विचारों के नजदीक जाते हुए भी उन्होंने दिखाया है। 'प्रेमाश्रम' के बलराज और कादर खाँ में जहाँ गाँधीवाद का दर्शन किया है वहीं दूसरी तरफ इशारा किया है कि 'अहिंसावाद का नाटक एक भयानक पलटा खाने ही वाला था'...। इसके परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट करते हुए प्रेमाश्रम की कथा को डॉ शर्मा इस तरह लिखते हैं- "घास तो किसी तरह छीली, अब टेनिसकोर्ट लीपने को कहा गया। डोल और रस्सी

मंगाई गई। कादिर डोल लेकर कुँए की तरफ चले परंतु दुखरन भगत घर की तरफ बढ़े। तहसीलदार से कहासुनी हुई, नतीजा यह हुआ कि चपरासी ने धक्का देकर उन्हें जूते लगाना शुरू किया। कादिर खाँ कुएँ से दौड़कर आए और चपरासी के आगे अपना सिर कर दिया। चपरासी ने उन्हें धक्का दिया और मारने के लिए जूता उठाया। अहिंसावाद का नाटक एक भयानक पल्टा खाने ही वाला था कि इक्के पर से आते प्रेम शंकर ने चपरासी को ललकारा।"[4]

मतलब साफ है कि जब कोई किसी को पीटने लगे तो अहिंसा की नीति देर तक नहीं टिक सकती। डॉ. रामविलास शर्मा प्रेमचंद के भीतर के गुस्से को देख रहे हैं और यह बताने की कोशिश कर रहे हैं कि प्रेमचंद का आदर्श जो कि गाँधी का था, स्थिति और व्यवस्था को देखते हुए धड़क रहा था। कमल किशोर गोयनका ने 'प्रेमचंद' (2013 ई.) में लिखा है - "प्रेमचंद हिंसा-अहिंसा, समाजवाद, साम्यवाद आदि पर भी गंभीरता पूर्वक विचार करते हैं और उनकी तुलनात्मक व्याख्या भी करते हैं। वे सन् 1919 में बोल्शेविक उसूलों के कायल होने का उल्लेख करते हैं, किंतु उन्हें कभी व्यावहारिक रूप नहीं देते हैं और उनके प्रति अपना विरोध प्रकट करते हैं।"[5]

'प्रेमाश्रम' उपन्यास गोयनका जी के इस कथन से सहमत होने के लिए बल नहीं देता। डॉ. रामविलास शर्मा भी गोयनका जी से प्रेमचंद का मूल्यांकन अलग तरीके से करते हैं। ललन प्रसाद सिंह ने डॉ रामविलास शर्मा के संबंध में लिखा है- "सबसे पहले उन्होंने ही प्रेमचंद की इस विशेषता को उजागर किया कि उन्होंने चंद्रकांता और तिलिस्म होशरूबा के लाखों पाठकों को 'सेवा सदन' का पाठक बना दिया। पाठक को मनोरंजन साहित्य से मोड़कर यथार्थवादी और गंभीर साहित्य की पढ़ाई की ओर प्रवृत्त कर देना, वाकई में एक युगान्तकारी काम था। डॉ. शर्मा ने ही इस बात को पकड़ा है कि प्रेमचंद भारतीय जीवन के स्थिर नहीं; गतिमान चित्र पेश करने वाले महान साहित्यकार हैं। वे प्रेमचंद को कबीर तुलसी तथा भारतेंदु की परंपरा से जोड़ते हैं।"[6]

एक तरफ से कहा जा सकता है कि जिस तरह बाद में नलिन विलोचन शर्मा ने 'मैला आँचल' की गंभीर समीक्षा कर फणीश्वर नाथ रेणु के महत्व को प्रतिपादित किया, पूर्व में ठीक उसी तरह रामविलास शर्मा ने प्रेमचंद के योगदान को रेखांकित कर; उनके कृतित्व की ऊंचाई से सबको परिचित कराया। और एक गंभीर आलोचक के तौर पर उन्हें स्वीकारा। कबीर की परंपरा में उन्हें खड़ा किया। प्रेमचंद गद्यकार के रूप में हिंदी के दूसरे कबीर हैं। जिस तरह से कबीर ने अपने समय के सामाजिक कुरीतियों से लड़े और सत्ता के दमन के शिकार हुए, ठीक उसी तरह प्रेमचंद ने भी अपने समय के पाखंड व कुरीतियों से लड़े और उनकी कृति 'सोजे वतन' सत्ता के दमनात्मक नीति के शिकार हुई। प्रेमचंद किसानों के लिए ब्रिटिश काल में पानी में डूबते उस तिनके के समान है इसका सहारा पाकर अपनी जान बचा पाती है। रामविलास शर्मा ने 'प्रेमचंद और उनका युग' पुस्तक में लिखा है - "बीसवीं सदी के भारतीय समाज में धीरे-धीरे एक परिवर्तन हो रहा था। साम्राज्यवादी सामंती जुए के नीचे जनता कसमसाने लगी थी और समाज का सबसे दलित-अंग नारी-राष्ट्रीय पराधीनता और घरेलू दासता, दोनों से पिसती हुई नारी-स्वाधीनता के लिए हाथ फैलाने लगी थी। प्रेमचंद ने सबसे पहले इस परिवर्तन को देखा था उसका स्वागत किया था, उसे बढ़ावा दिया था।"[7]

डॉ. शर्मा की यह टिप्पणी प्रेमचंद को हिंदी उपन्यासकार के रूप में स्थापित करने वाला उपन्यास 'सेवासदन' (1918 ई.) की नायिका सुमन के परिप्रेक्ष्य में की गई है । सुमन अपने पति द्वारा कोसे जाने और धमकाने पर भी पूर्व की स्त्रियों की भाँति न गिड़गिड़ाती है और न पैरों पड़ती है। उसका स्वाभिमान उसे गिड़गिड़ाने नहीं देता है। वह अपने पति की गालियाँ खाने के लिए तैयार नहीं है। प्रेमचंद ने 'गोदान' में धनिया का जो चरित्र निर्मित किया है, वैसा चरित्र संसार के किसी भी सहित्य में दुर्लभ है। धनिया में त्याग है, समर्पण है, स्वाभिमान है, गट्टा के बल पर कमाने की शक्ति भी है। वह पति के साथ जीती भी है, उसे फटकारती भी है। समाज से पंगा नहीं लेती है। वह अपने पोते को दुलारती भी बदली है। वह स्त्री है और स्त्री के दर्द को समझती भी है। वह ताउम्र किसी के आगे हाथ नहीं फैलाती। वह प्रेमचंद के सुमन से भिन्न इसलिए है कि वह पिछड़े वर्ग से ताल्लुक रखती है। वह 'त्यागपत्र' की मृणाल भी नहीं है । वह जिंदगी जीना जानते हैं। उसके पास दुःख है, पर उसमें इतना जोर नहीं कि उसे झुका सके। प्रेमचंद का उपन्यास 'रंगभूमि' (1925 ई.) के संबंध में रामविलास शर्मा ने लिखा है- "'रंगभूमि' उपन्यास सन्' 30 का आंदोलन छिड़ने के पहले लिखा गया था। प्रेमचंद ने मानो भविष्य की ओर देखते हुए तमाम हिंदुस्तान की जनता की तरफ से अंग्रेजी राज को चुनौती देते हुए सूरदास से कहलाया था- फिर खेलेंगे ज़रा, दम ले लेने दो।"[8]

यह कृति प्रेमचंद की दूरदर्शिता का परिचायक है। वे उद्योगपतियों के नापाक इरादों को समझते थे और यह भी कि किस तरह साम्राज्यवादी अपना विस्तार कर रहे हैं। उन्हें रोके बिना आमजन का कल्याण संभव नहीं है। हमारी ही जमीन पर खड़े होकर वे अमीर होते जाएँगे और हम उनकी गुलामी करने के लिए विवश हो जाएँगे। 'रंगभूमि' का सूरदास अपनी लड़ाई में आगे है। अकेला होकर भी अपने अस्तित्व के लिए लड़ रहा है। सूरदास के चरित्र द्वारा भारतीयों को प्रेमचंद यह संदेश देना चाहते हैं कि प्रत्येक भारतीय उनके खिलाफ लड़ सकता है। प्रेमचंद के इस उपन्यास के बारे में डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है- "प्रेमचंद की पैनी निगाह देख रही थी कि हिंदुस्तान की जनता लड़ रही है - बिना किसी पार्टी की मदद के, बिना किसी राजनीतिक नेता की सलाह का फायदा उठाए।"[9]

सूरदास किसका प्रतीक है। वह दलित साहित्य की आधारशिला है। ऐसे नायक का सृजन दलित साहित्यकारों ने भी नहीं किया है। यह प्रेमचंद की विशेष उपलब्धि है। सूरदास हिंदी साहित्य का ऐसा नायक है जिसे अन्याय देख कर चुप नहीं रहा जाता। इसलिए वह लड़ रहा है; क्योंकि वह जानता है कि अगर मिलना ही है तो लड़कर क्यों न मिटा जाए। काश, यह बात सभी भारतीय समझ लेते! इस उपन्यास की स्त्री पात्र सोफ़िया भी अपने चरित्र से बरबस आकर्षित करती है। वह स्त्री होकर भी धर्म-भीरू नहीं है। उसकी यह खासियत हमें बहुत आकर्षित करती हैं। उसके संबंध में डॉरामविलास शर्मा लिखते हैं- "सोफिया एक मानवतावादी विचारों की लड़की है। वह धर्म के बंधन नहीं मानती। 'रंगभूमि' शायद हिंदी का पहला उपन्यास है इसमें एक ईसाई लड़की और एक हिंदू लड़के का प्रेम दिखाया गया है। प्रेमचंद प्रेम संबंध को धार्मिक पाबंदियों से ऊँची चीज समझते थे, इसलिए उन्हें कोई तोड़े तो इसे अच्छा मानते थे।"[10]

राजेंद्र यादव भी इसी रास्ते सामंती जकड़नों से भारतीय समाज को निकालना चाहते थे। दलित लेखक के रूप में नारायण सोनकर अपने 'डंक' तथा 'सूअरदान' उपन्यास में छुआछूत की भावना का अतिक्रमण

करना प्रेम संबंध के जरिए करना चाहते हैं। जातिवाद को मिटाने का यह सबसे सरल रास्ता है; पर यह आसान नहीं है। क्योंकि सामाजिक स्वीकृति मिलनी अभी शेष है। ललन प्रसाद सिंह जी का उदल, बनाफर उपजाति का होकर भी राजपूत लड़की से विवाह रचाता है।

डॉ. रामविलास शर्मा ने प्रेमचंद की महत्वपूर्ण कृति 'गोदान' (1936 ई.) के संबंध में लिखा है - "प्रेमचंद ने 'गोदान' में गाँवों की प्रकृत्ति, वहाँ के किसानों और उनके जीवन के बारे में ऐसे प्रेम से लिखा है मानो ये अब बिछड़ने वाले हों और वह अब इन्हें बार-बार न देख पाएँगे। 'गोदान' के वर्णन और चित्रण में एक अपूर्व आत्मीयता और तल्लीनता है जो प्रेमचंद के उपन्यासों में भी कम मिलती है।"[11]

इसलिए यह उपन्यास इतना गहरा, इतना सच्चा और यथार्थवादी बन गया है कि इसके प्रत्येक पात्र अपने चरित्र को बखूबी भोगते हैं और इतना कि प्रेमचंद की दृष्टि उन्हें कई कोणों से उजागर कर देती है। इस उपन्यास में किसान का शोषण पूर्व की अपेक्षा कुछ सूक्ष्म तरीके से होते हुए दिखाया गया है। जमींदार को होरी बेगार देता है और जमींदार ऊपर से देशभक्त और सामाजिक दिख रहा है। 'गोदान' का जमींदार राय साहब का चरित्र ठीक इसी तरह का है। प्रेमचंद ने उसकी पूरी टीम, जिसके वह संपर्क में है, एक-एककर कलई खोल दी है। गाँव से शहर तक जो शोषण का सिलसिला शुरू है, उससे प्रेमचंद पर्दा उठाते हैं। प्रेमचंद की यह कलाकृति, क्लासिक कृति है। इसका महत्व प्रेमचंद के जाने के बाद भी बना हुआ है। रायसाहब के मित्रों में मिस्टर खन्ना, शक्कर मिल के निर्देशक तथा बैंक के मैनेजर हैं। मिस्टर मेहता और मालती के संवाद भी बड़े लोगों की ओछी मानसिकता को बाहर लाता है। यह उपन्यास 'गोर्की' की 'माँ' और बल्जाक के 'किसान' की श्रेणी का है। यह किसान जीवन की अमर महागाथा है। प्रेमचंद इसलिए भी दलित, पिछड़ों मजदूरों व किसानों के लेखक हो गए कि उन्होंने पहली दफा हिंदी में पिछड़े-किसान, दलित-मजदूर को नायक बनाने का कार्य किया। 'प्रेमाश्रम' उपन्यास की समीक्षा में उनकी इस खूबी को डॉ.शर्मा ने रेखांकित किया है। वे लिखते हैं - "प्रेमचंद ने बेगार करने वाले, हल जोतने वाले, प्लेग और सरकार का मुकाबला करने वाले किसानों को नायक बना दिया। मनोहर, बलराज, कादिर, दुखरन आदि इस उपन्यास के हीरो हैं।"[12]

ठीक 'प्रेमाश्रम' की तरह 'गोदान' में होरी, धनिया, झुनिया, भोला, गोबर तथा 'रंगभूमि' में सूरदास, 'कर्मभूमि' की मुन्नी ऐसे पात्र हैं जिनके संबंध में पूर्व में सोचा भी नहीं जा रहा था कि ये सभी किसी कृति के नायक बनने के गुण भी अपने में रखते हैं। प्रेमचंद के उपन्यासों ने नायक की परिभाषा ही बदल दी। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का 'चतुरी चमार' भी इसका एक उदाहरण है। प्रेमचंद ने आम जीवन से रस-पानी ग्रहण कर अपनी कृतियों को सींचा, उसे जीवन प्रदान किया। उन्होंने आम लोगों में वह क्षमता देखी, जिसके बदौलत सत्ता को चुनौती दी जा सकती है। उसे बदला जा सकता है। यह प्रेमचंद की दृष्टि का कमाल ही है।

डॉ. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद के जीवन-दर्शन के बारे में अपनी राय देते हैं कि - "प्रेमचंद का जीवन-दर्शन इसी संसार में जूझने वाले मनुष्यों के सुख-दु:ख, आशा-निराशा, विजय-पराजय का चित्रण करने में प्रकट होता है। वह पाठक को यह नहीं सिखाते कि यह संसार झूठा है, इसमें रहने वाले मनुष्य झूठे हैं, उनका संघर्ष झूठा है। वह दिखलाते हैं कि मनुष्य जिन परिस्थितियों में पैदा हुआ है उनसे प्रभावित होते हुए भी उन्हें बदलने की कोशिश करता है।"[13]

और यही कारण है कि प्रेमचंद दुनिया के प्रसिद्ध लेखकों लोगों के बीच सदा स्मरण किए जाते हैं। वजह वह परिस्थितियों, रूढ़ियों, समस्याओं पर विजय पाने की आशा दिखाने वाले लेखक हैं। उनकी रचनात्मकता आमजन को, दलित- पिछड़ों को, किसान को सकारात्मक ऊर्जा से भर देने वाली है।

प्रेमचंद का जीवन भी अपने आप में प्रेरणादायक है। उनके जीवन को जानने और समझने के लिए डॉ शर्मा का 'प्रेमचंद का जीवन' अध्याय को आराम से पढ़ने की जरूरत है। प्रेमचंद हृदय से कितने महान थे - इसका अंदाजा सहज है लग जाएगा। डॉ.शर्मा लिखते हैं- "प्रेमचंद कुप्रिन का उपन्यास 'यामा' पढ़ते-पढ़ते बच्चों की तरह फूट-फूट कर रोने लगे थे। वह एक अत्यंत सहृदय और परदु:ख कातर व्यक्ति थे। उन्होंने जीवन-भर कठिनाइयों का सामना किया, लेकिन अपने मन में उन्होंने कभी कटुता नहीं आने दी। उनके आँसू हृदय में छिपे रहते थे, तरल आँखों में हँसी नाचा करती थी।"[14]

यह प्रेमचंद की प्रगतिशीलता ही थी कि अपने अंदर के दु:ख से दूसरों को दुखी नहीं करना चाहते थे इसलिए उनकी आँखों में हँसी नाचती थी। प्रेमचंद को हम जितना समझते जाते हैं उतना ही लगता है - कम है। 'मार्क्सवाद और रामविलास शर्मा'(2014 ई.) पुस्तक में भरत सिंह ने लिखा है- "सामंती व्यवस्था के अंतर्गत विनिमय के विकास के साथ दर्शन, देवकथाओं और धार्मिक विश्वासों से अलग हटकर, विकसित होता है। उस व्यवस्था में जो भी मनुष्य को स्वतंत्र रूप से सोचना सिखाता है, वह प्रगतिशील भूमिका निबाहता है।"[15]

प्रेमचंद ने अपने विचारों से, अपने लेखन से, मनुष्य को स्वतंत्र रूप से सोचना सिखाया, जुल्म और शोषण के खिलाफ 'सूरदास' की तरह लड़ना सिखाया, होरी और धनिया के जीवन को आधार बना ब्रिटिश कालीन भारतीय समाज और किसानों की विशेषताओं एवं जीवन-संघर्षों से परिचित कराया। 'कर्मभूमि' के माध्यम से एक बच्ची पर अनाचार की कथा कही, 'प्रेमाश्रम' के द्वारा अनाचार के खिलाफ खड़े होने की सीख दी।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि डॉ. रामविलास शर्मा ने प्रेमचंद का समग्र मूल्यांकन करते हुए यह बताने की कोशिश की है कि प्रेमचंद महान हृदय के लेखक थे। उनके हृदय में किसानों, दलितों, स्त्रियों के लिए गहरा सम्मान व लगाव था। वे जानते थे कि सामान्यजन में ही पुरानी व्यवस्था को बदलने की शक्ति हैं। वे यह भी जानते थे कि सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक गुलामी को समाप्त करके ही नए समाज का निर्माण संभव है। उनकी पूरी रचनात्मकता के केंद्र में इसी नएपन का आग्रह है, जहाँ हर मनुष्य स्वतंत्रता व आबाद होने की कामना से प्रेरित है।

संदर्भ ग्रन्थ

1 परंपरा का मूल्यांकन, रामविलास शर्मा, पृष्ठ 143
2 प्रेमचंद, डॉ.रामविलास शर्मा, पृष्ठ 131
3 प्रेमचंद : किसान जीवन संबंधी कहानियाँ, प्रधान संपादक - रवींद्र कालिया, पृष्ठ 209
4 प्रेमचंद, रामविलास शर्मा, पृष्ठ 85
5 प्रेमचंद, कमल किशोर गोयनका, पृष्ठ 40

6 आलोचना की मार्क्सवादी परंपरा, ललन प्रसाद सिंह, पृष्ठ 144-145

7 प्रेमचंद और उनका युग, डॉ. रामविलास शर्मा, पृष्ठ 36

8 उपर्युक्त, पृष्ठ 76-77

9 उपर्युक्त, पृष्ठ 80

10 उपर्युक्त, पृष्ठ 77

11 उपर्युक्त, पृष्ठ 96-97

12 उपर्युक्त, पृष्ठ 45

13 उपर्युक्त, पृष्ठ 55

14 उपर्युक्त, पृष्ठ 23

15 मार्क्सवाद और रामविलास शर्मा, भरत सिंह, पृष्ठ 94